**न्यायमूर्ति श्री सुरिंदर गुप्ता, के सामने**

**सुभाष चंद शर्मा-याचिकाकर्ता**

**बनाम**

**हरियाणा राज्-  प्रतिवादी**

**2015 का सी. आर. एम.  नंबर एम-21673**

**07 जुलाई 2015**

**दंड प्रक्रिया संहिता, 1973- धारा 482- भारतीय दंड संहिता, 1860- धारा 120-बी- धारा 482 के संदर्भ में आरोप तय करने के आदेश में हस्तक्षेप की गुंजाइश बेहद सीमित है- धारा के तहत इस न्यायालय की शक्ति का प्रयोग इस प्रकृति के मामले में धारा 482 अपवाद है, नियम नहीं- धारा 482 के तहत प्रयोग करते समय यह न्यायालय अपील की अदालत के रूप में कार्य नहीं करता है।**

यह अभिनिर्धारित किया गया कि यह कानून का अच्छी तरह से स्थापित प्रस्ताव है कि यह न्यायालय किसी कार्यवाही को रद्द करने के लिए अपनी अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग कर सकता है जहां यह स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है कि कानूनी बाधा है।  (पैरा 10)

आगे कहा गया कि जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, तय कानूनी स्थिति के मद्देनजर, मेरा विचार है कि इस याचिका में याचिकाकर्ता के खिलाफ दंडनीय अपराध के लिए आरोप तय करने के ट्रायल कोर्ट के दिनांक 26.03.2015 के आदेश में किसी भी हस्तक्षेप की मांग करने का कोई औचित्य नहीं है। धारा 420 को धारा 120-आईपीसी के साथ पढ़ा गया और पुनरीक्षण न्यायालय ने दिनांक 06.06.2015 को ट्रायल कोर्ट के आदेश को बरकरार रखा। (पैरा 11)

याचिकाकर्ता(याचिकाकर्ताओं) के वकील, श्री रंजीत सैनी, वरिष्ठ वकील श्री पुनीत बालीश्री और अरुण गुप्ता के साथ ।

**न्यायमूर्ति सुरिन्दर गुप्ता**

(1) याचिकाकर्ता पर अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, रेवाडी द्वारा पारित आदेश दिनांक 26.03.2015 के तहत भारतीय दंड संहिता (संक्षेप में आईपीसी) की धारा 120-बी के साथ पठित धारा 420 के तहत दंडनीय अपराध के लिए आरोप पत्र दायर किया गया था। उन्होंने आरोप तय करने के आदेश के खिलाफ पुनरीक्षण दायर किया, जिसे विद्वान सत्र न्यायाधीश, रेवाड़ी ने दिनांक 06.06.2015 के आदेश के तहत खारिज कर दिया।

(2) अभियोजन पक्ष का मामला, संक्षेप में, यह है कि पुनरीक्षण याचिकाकर्ता ने लगभग 9 कनाल 7 मरला भूमि सेल डीड नंबर 2997 दिनांक 22.02 1994 के माध्यम से खरीदी थी और ऋण उठाते समय इसे बैंक के पास गिरवी रख दिया था। बैंक ने 04.11.1987 को वसूली के लिए एक मुकदमा दायर किया जिसमें अपीलकर्ता ने 26.05.1988 को लिखित बयान दायर किया। बैंक प्रबंधक और बैंक के अन्य अधिकारियों की मिलीभगत से, बैंक के पास बंधक भूमि को राजस्व रिकॉर्ड में शामिल नहीं किया गया और याचिकाकर्ता द्वारा बंधक के तथ्य और लंबितता को छुपाकर 13.12.1990 को जमीन बेच दी गई। वसूली सूट. सुशील कुमार स्वामी (एचयूएफ) के पक्ष में निष्पादित सेल डीड नंबर 2214 दिनांक 13.09.1990 के माध्यम से भूमि बेचते समय यह अनुमान लगाया गया था कि यह पट्टे, बंधक या किसी अन्य प्रकार की देनदारी जैसी सभी बाधाओं से मुक्त है। भूमि को विक्रेता सुशील कुमार स्वामी द्वारा आगे हस्तांतरित किया गया और बाद में हस्तांतरण भी तब तक हुआ जब तक कि यह शिकायतकर्ता के हाथों में नहीं पहुंच गई।

(3) प्रारंभ में जांच के दौरान याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप सिवल प्रकृति के पाए गए और रद्दीकरण रिपोर्ट तैयार की गई। पुलिस महानिरीक्षक, रेवाडी (दक्षिण) ने जांच में कई खामियां पाईं और आगे की जांच के आदेश दिए। आगे की जांच में यह पाया गया कि पहले की जांच के दौरान कुछ दस्तावेज और सबूत रिकॉर्ड पर नहीं रखे गए थे। यह भी सामने आया कि याचिकाकर्ता

ने अपनी 9 कनाल 7 मरला जमीन भारतीय स्टेट बैंक के पक्ष में गिरवी रख दी थी। रेवारी और बैंक ने 04.07.1987 को वसूली के लिए एक सिविल मुकदमा दायर किया था। याचिकाकर्ता की जानकारी में यह तथ्य था कि जमीन बंधक पड़ी है और वसूली के लिए मुकदमा भी दायर किया गया है। हालाँकि, उन्होंने सेल डीड नंबर 2214 दिनांक 13.12.1990 के माध्यम से भूमि बेच दी और सेल डीड में यह उल्लेख किया गया था कि भूमि सभी बाधाओं से मुक्त है। यह भी पाया गया कि अपीलकर्ता ने प्रबंधक, भारतीय स्टेट बैंक, रेवाडी की मिलीभगत से जानबूझकर भूमि के बंधक की जानकारी राजस्व विभाग को नहीं दी थी। यदि सूचना दे दी गई थी और राजस्व रिकॉर्ड में दर्ज कर दिया गया था, तो याचिकाकर्ता भूमि को हस्तांतरित नहीं कर सकता था। बैंक के मैनेजर को भी दोषी पाया गया लेकिन उसके खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की जा सकी क्योंकि उसकी पहले ही मौत हो चुकी थी।

(4) चालान पेश करने पर ट्रायल कोर्ट ने प्रथम दृष्टया पाया कि धारा 420 के साथ पठित धारा 120-बी आईपीसी के तहत दंडनीय अपराध का मामला है और याचिकाकर्ता के खिलाफ उन्होंने आरोप पत्र दायर किया गया था और याचिककर्ता ने दोषी नहीं होने का अनुरोध किया और मुकदमे का दावा किया। इसके खिलाफ उन्होंने पुनरीक्षण याचिका दायर की आरोप तय किया गया, जिसे पुनरीक्षण न्यायालय ने भी खारिज कर दिया। निम्नलिखित टिप्पणियों के साथ:-

> "10. यह तर्क कि जब 1990 में संशोधनवादी-अभियुक्त के पक्ष में उत्परिवर्तन को मंजूरी दी गई थी, तो 1986 में जमीन को गिरवी रखने का कोई सवाल ही नहीं था, इसमें भी कोई दम नहीं है क्योंकि बंधक मूल स्वामित्व विलेख को बैंक में जमा करके बनाया गया था। अन्यथा भी तथ्य यह है कि बैंक का प्रबंधक संशोधनवादी-अभियुक्त के साथ मिला हुआ था। इसलिए, इस तथ्य को जानबूझकर नजरअंदाज कर दिया गया कि राजस्व रिकॉर्ड में संशोधनवादी-अभियुक्त के पक्ष में बिक्री का कोई प्रतिबिंब नहीं था। संशोधनवादी-अभियुक्त को उस खाते से कोई लाभ नहीं मिल सकता है।

11. रिकॉर्ड पर उपलब्ध दस्तावेजों से यह स्पष्ट है कि बैंक ने दिनांक 4.11.1987 को मुकदमा दायर किया। संशोधनवादी-अभियुक्त ने 26.5.1990 को लिखित बयान दायर किया। इसलिए, जब उसने 13.12.1990 को पहली बार जमीन बेची तो उसे पता था कि विवाद था। उन्होंने न केवल बंधक के लाभ (वास्तविक तथ्य) को छुपाया, बल्कि मुकदमे के लंबित होने को भी छुपाया। मामले के तथ्य और परिस्थितियाँ भारतीय दंड संहिता की धारा 415 के इलस्ट्रेशन (i) द्वारा कवर की गई हैं, जो इस प्रकार है-

""ए" एक संपत्ति बेचता है और बी को सौंप देता है। ए, यह जानते हुए कि ऐसी बिक्री के परिणामस्वरूप संपत्ति पर उसका कोई अधिकार नहीं है, बी को पिछली बिक्री और हस्तांतरण के तथ्य का खुलासा किए बिना, उसे ज़ेड को बेचता है या गिरवी रखता है, और प्राप्त करता है जेड से ख़रीद या गिरवी के पैसे ए धोखे  से ले लेता है"।

(5) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने तर्क दिया है कि पक्षों के बीच मामला दीवानी प्रकृति का है। वर्ष 1987 में याचिकाकर्ता के खिलाफ बैंक द्वारा दायर मामला अभी भी ऋण वसूली न्यायाधिकरण के समक्ष पेंडिंग है, जिसे अपना निष्कर्ष दर्ज करना है कि क्या विवाद में संपत्ति बैंक के पास गिरवी रखी गई थी। ऋण वसूली न्यायाधिकरण द्वारा अंतिम फैसला सुनाए जाने तक, शिकायतकर्ता द्वारा लगाए गए आरोप कि विवादित भूमि बैंक के पास बंधक पड़ी थी और शिकायतकर्ता के साथ धोखाधड़ी की गई है, में कोई दम नहीं है या यह धोखाधड़ी का मामला बनता है।

(6) संहिता की धारा 482 के संदर्भ में आरोप तय करने के आदेश में हस्तक्षेप की गुंजाइश बेहद सीमित है और इस प्रकृति के मामले में धारा 482 के तहत इस न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग किया जाता है, यह एक अपवाद है, नियम नहीं।

(7) धारा 482 में तीन परिस्थितियों की परिकल्पना की गई है

(i) संहिता के तहत किसी आदेश को प्रभावी करने के लिए:

(ii) न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए, और

(iii) अन्यथा न्याय के उद्देश्य को सुरक्षित करना।

(8) सीआरपीसी की धारा 482 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए, यह न्यायालय अपील या पुनरीक्षण न्यायालय के रूप में कार्य नहीं करता है। मामले के तथ्य, जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि सबसे पहले, अपीलकर्ता ने जानबूझकर उसके द्वारा निष्पादित विक्रय पत्र में गलत बयान दिया था कि भूमि सभी बाधाओं से मुक्त थी, जबकि वह पूरी तरह से जानता था कि भूमि बंधक के अधीन थी। बैंक द्वारा दायर एक सिविल मुकदमा पेंडिंग था और याचिकाकर्ता ने पहले ही उस सिविल मुकदमे में एक लिखित बयान दायर कर दिया था। दूसरा, यह पाया गया कि याचिकाकर्ता ने बैंक के तत्कालीन प्रबंधक के साथ मिलकर जानबूझकर बैंक के पक्ष में बंधक के बारे में राजस्व विभाग को सूचना नहीं भेजी थी, तीसरा, पुनरीक्षण न्यायालय ने ऋण वसूली के अवलोकन पर भी ध्यान दिया है ट्रिब्यूनल के आदेश दिनांक 02.05.2008 से पता चलता है कि भूमि बैंक के पास बंधक थी। पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 06.06.2015 के पैरा 8 में दर्ज उपरोक्त टिप्पणियाँ इस प्रकार पढ़ें:-

> "8. जहां तक इस बात का सवाल है कि बंधक साबित करने के लिए रिकॉर्ड पर कोई दस्तावेज नहीं है, तथ्य यह है कि ऋण वसूली न्यायाधिकरण ने दिनांक 2.5.2008 के आदेश के तहत यह माना है कि भूमि संशोधनवादी-अभियुक्त द्वारा बैंक के पक्ष में गिरवी रखी गई थी। आदेश का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:-
>
> "दस्तावेजों के निष्पादन न होने के बारे में प्रतिवादियों द्वारा दी गई दलील, उन्हें किसी भी तरह से मदद नहीं करती है, क्योंकि, उन्होंने खाली दस्तावेजों पर हस्ताक्षर स्वीकार किए हैं और आरोप लगाया है कि इसे बाद में बैंक द्वारा भरा गया है। इसके अलावा, प्रतिवादियों ने कहा है यह साबित करने के लिए प्रशंसनीय स्पष्टीकरण देने में भी सक्षम नहीं हूं कि आवेदक बैंक के कब्जे में उनके मूल स्वामित्व विलेख कैसे थे। किसी भी मामले में, उपरोक्त दस्तावेजों पर सावधानीपूर्वक विचार करने पर, मैं मानता हूं कि आवेदक बैंक द्वारा गिरवी रखने का

अनुरोध साबित हुआ है और प्रतिवादियों द्वारा की गई दलील अप्रमाणित है।"

(9) **'हरियाणा राज्य बनाम भजन लाल[1]'** के रूप में रिपोर्ट किए गए मामले में, मामलों की कुछ श्रेणियां जहां यह न्यायालय आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने की अपनी अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग कर सकता है, उन्हें इस प्रकार गिनाया गया है: -

1. जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट या शिकायत में लगाए गए आरोप, भले ही उन्हें अंकित मूल्य पर लिया जाए और पूरी तरह से स्वीकार कर लिया जाए, प्रथम दृष्टया कोई अपराध नहीं बनता है या आरोपी के खिलाफ कोई मामला नहीं बनता है।

2. जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट और एफ.आई.आर. के साथ संलग्न अन्य सामग्रियों में आरोप, यदि कोई हों, संहिता की धारा 155(2) के दायरे में मजिस्ट्रेट के आदेश को छोड़कर, संहिता की धारा 156(1) के तहत पुलिस अधिकारियों द्वारा जांच को उचित ठहराते हुए किसी संज्ञेय अपराध का खुलासा न करें।

3. जहां एफआईआर या शिकायत में लगाए गए निर्विवाद आरोप और उसके समर्थन में एकत्र किए गए सबूत किसी अपराध के घटित होने का खुलासा नहीं करते हैं और आरोपी के खिलाफ मामला नहीं बनाते हैं।

4. जहाँ, एफ.आई.आर. में लगे आरोप, एक संज्ञेय अपराध नहीं है बल्कि केवल एक गैर-संज्ञेय अपराध है, जैसा कि संहिता की धारा 155 (2) के तहत माना गया है, मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना किसी पुलिस अधिकारी द्वारा किसी भी जांच की अनुमति नहीं दी जाती है।

5. जहां एफआईआर या शिकायत में लगाए गए आरोप इतने बेतुके और स्वाभाविक रूप से असंभव हैं, जिनके आधार पर कोई भी

[1] 1992 सप्लमेन्ट्री(1) अस सी सी 335

विवेकशील व्यक्ति कभी भी इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकता है कि आरोपी के खिलाफ कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है।

6. जहां संहिता या संबंधित अधिनियम (जिसके तहत आपराधिक कार्यवाही शुरू की जाती है) के किसी भी प्रावधान में संस्था और कार्यवाही जारी रखने पर स्पष्ट कानूनी रोक है और/या जहां कोई विशिष्ट प्रावधान है संहिता या संबंधित अधिनियम, पीड़ित पक्ष की शिकायत के लिए प्रभावी निवारण प्रदान करता है।

7. जहां किसी आपराधिक कार्यवाही में स्पष्ट रूप से दुर्भावना के साथ भाग लिया जाता है और/या जहां कार्यवाही दुर्भावनापूर्ण रूप से आरोपी पर प्रतिशोध लेने के लिए और निजी और व्यक्तिगत द्वेष के कारण उसे परेशान करने की दृष्टि से शुरू की जाती है।

(10) कानून का यह सुस्थापित प्रस्ताव है कि यह न्यायालय उन कार्यवाही को रद्द करने के लिए अपनी अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग कर सकता है जहां यह स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है कि कुछ कानूनी दोषों के अभाव में कार्यवाही जारी रखने की संस्था के खिलाफ कानूनी रोक है, मंजूरी की आवश्यकता है, जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट में लगाए गए आरोप या शिकायत को उसके अंकित मूल्य के रूप में लिया गया है और पूरी तरह से स्वीकार किया गया है, कथित अपराध का गठन नहीं किया गया है या जहां आरोप एक अपराध का गठन करते हैं लेकिन कोई कानूनी सबूत पेश नहीं किया गया है या सबूत पेश नहीं किया गया है आरोप को स्पष्ट रूप से साबित करने में विफल रहता है।

(11) जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, स्थापित कानूनी स्थिति को ध्यान में रखते हुए, मेरा विचार है कि इस याचिका में याचिकाकर्ता के खिलाफ दंडनीय अपराध के लिए आरोप तय करने के ट्रायल कोर्ट के दिनांक 26.03.2015 के आदेश में किसी भी हस्तक्षेप की मांग करने का कोई औचित्य नहीं है। धारा 420 आईपीसी की धारा 120-बी के साथ पढ़ी गई और पुनरीक्षण न्यायालय ने दिनांक 06.06.2015 को ट्रायल कोर्ट के आदेश को बरकरार रखा गया है।

(12) बर्खास्त।

**अस्वीकरण** : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

संतोष (उ.ई.ड.नंबर HR 0672)

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

तोशाम (भिवानी), हरियाणा